वर्ष : ७ | अंक : २३ | जाने.-मार्च २०२४ | स्थळ : पुणे | पृष्ठे : ८०+४ | किंमत : रू.१००/- | ISSN 2582-1865

वसंतवर्षा

वर्षा पब्लिकेशन

"Vasantvarsha" Quarterly : January-March 2024 Registered with the Registrar of Newspaper for India. Under No.: MAHMUL/2018/77787

प्रेषक : मा.प्रकाशक **'वर्षा पब्लिकेशन'**स.नं.२३/१,'प्रभुकुंज',आनंद विहार २,हिंगणे खुर्द, पुणे ४११०५१.

Book Pkt Periodical Category.

To,
Mr/Ms...

....

संत रविदास के काव्य में नैतिक मूल्य

प्रा. सीताबाई नामदेव पवार

नैतिक मूल्य मानवीय दृश्टिकोण एवं आंतरिक अनुभव पर आधारित होते हैं। वह मानवी परिवेश में विकसित होते रहते हैं। जब तक कोई मूल्य मानवीय अनुकूल एवं हितसाधक बना रहता हैं तब तक उसमें किसी प्रकार का बदलाव नहीं लाया जाता। डॉ. विमल के मतानुसार मूल्य परिवर्तन हैं जो जीवन सचेतना, मानसिक संरचना या विचारसारणी के प्रभावित करने में सार्थक हो। मध्ययुगीन मानवतावादी काव्य के प्रणेता संत रविदास का काव्य नैतिक मूल्य का प्रमाण है। उनके व्यक्तित्व में समाविष्ठ गुण - प्रेम, सद्भाव, सौहार्द, दया, परोपकार, सत्य उनके काव्य के उद्देश्य के रूप में दृष्टिगोचर होते हैं। तत्कालीन समाज वर्णव्यवस्था और जातिव्यवस्था से विघटित हो गया था। उसका विरोध करते हुए रविदास अपने काव्य में समदृश्टि का प्रदान कर हमें यह उपदेश देते है कि जाति का प्रपंच शोषण के सादर रूप में रचा गया है।

१) प्रेमभाव तथा समदृश्टि

मनुश्य मात्र एक समान है। समूचे विश्व धरातल पर मानव ही एक जाति है और मानवतावाद ही एक धर्म है। वहाँ न कोई जाति है न कोई वर्ण है। जिस प्रकार केले का पेड अपने तने में पत्तों की परते एक ईकाई के रूप में अपना अस्तित्व प्रकट करता है वैसे मनुश्य भी है। यदि पत्तों की एक एक परत हटा दी जाये तो पूरा पेड नश्ट हो जायेगा। इसी प्रकार सामाजिक विकास को यदि इकाई माने तो व्यक्ति उस इकाई के अस्तित्व, उसके विकास से जुडा है। तथाकथित चार वर्ण एवं उनके जातियों में जन्मे सभी लोगों की जाति एक ही हैं और वो है मनुश्य जाति। मनुश्य जाति को परस्पर प्रेम और सद्भाव के सहारे अपना विकास करना चाहिए। यह मनुश्य जाति में समदृश्टि का भाव और प्रेमभाव ही मनुश्य मात्रा के कल्याण का एकमेव मार्ग है। इसीलिए न कोई धर्मभेद न कोई जातिभेद मानवीय समाज में रखकर सबको एक समान मानते हुए वे अपने काव्य में कहते है-

हिंदू तुरक मॅह नहीं कछु भेदा,
दुइ आयहु इक द्वार ।
प्राण पिंड लोहु मांस एकइ,
कहि रैदास बिचार ।।

हिंदू-मुस्लिम कट्टरपंथियों को समानता का उपदेश देते हुए वे काव्य में कहते है- ज़ब मनुश्य मात्र एक जाति है, जब जन्म की प्रकिया समान है, जब प्राण, पिंड, रक्त, मांस सबसे एक ही प्रकार से मिलते है तब यह हिंदू मुसलमान का झगडा कैसे? संत रविदास ने दोनों धर्मो के प्रति समान भाव रखते हुए सभी में मानवता के तत्व होने का उल्लेख किया है। उसकी वैज्ञानिक सोच यह मानती है कि हिंदू-मुसलमानों का भेद बाहरी है, स्वंय निर्मित नहीं हैं। मनुश्य मात्र होने के कारण सभी मनुश्य परस्पर समानता और प्रेममार्ग की ओर अग्रेसर होते हुए वे कहते है कि प्रेम को अनन्य साधना का आधार मानते हैं। उनके लिए प्रेम से बडी न कोई भक्ति है, न मंदिर और न मसजिद। भक्ति के जूठे उपादान मंदिर, मसजिद में विराजमान पंडित, पुरोहित और मौलवी भक्ति को अपवित्र कर देते हैं।[१] किंतु प्रेम सामाजिक स्तर पर मनुश्य मात्रा को पवित्रता से जोड देता है। प्रेम मनुश्य को अनन्य साधना का यात्री बना देता है। धार्मिक अंधविश्वासों की उच्छृंखलता पर प्रेम और समदृश्टि मर्यादा का अंकुश लगा देती है जिससे नैतिक मूल्यों का विकास और सामजिक जिम्मेदारियों का दायित्व

बोध हो जाता है।

वैश्विक धरातल पर मानवता को धर्म का स्थान देकर संत रविदास प्रेमभाव तथा समदृश्टि को आवश्यक तत्व मानते हैं। उसके अनुसार प्रेम जगत का व्यापार है। प्रेम हदय से होता है। अतः मस्तिश्क से उसका कोई संबंध नहीं हैं । हदय जगत के इस उदात्त व्यापार में तर्क, वितर्क, जोर, दबाव नहीं होता हैं। प्रेम का लक्ष्य प्रेम ही है और कुछ नहीं। प्रेम जगत में समदृश्टि अहंम् होती हैं क्योंकि वहाँ न कोई निम्न, न कोई धनी, न कोई निर्धन, न कोई महान होता हैं। वहाँ सभी एक समान होते हैं। मनुश्य मात्र में मानवता का भाव जागृत करने के लिए प्रेमभाव तथा समदृश्टि सर्वश्रेश्ठ और आवश्यक हैं। इस तरह का ज्ञान तत्कालीन समाज में चेताते हुए वे अपने काव्य में कहते हैं-

मुसलमान सो दोसती,
हिंदुअन सो कर प्रीत ।
रविदास ज्योति सभ राम की,
सभ है अपने मीत।।२।।[२]

जहाँ हिंदू-मुसलमान धर्मभेद अपनी चरमसीमा पर था, लोग एक दूसरे के जान के प्यासे हुए थे, वहाँ संत रविदास का इस तरह का प्रेम तथा समदृश्टि उपदेश कट्टपंथियों की आँखे खोल देता था। हिंदूओं के साथ प्रेम, मुसलमानों के साथ दोसती करने का उपदेश रविदास देते थे क्योंकि वे जानते थें हिंदू और मुसलमानों में आत्मारुपी राम एकही हैं। सभी एक दूसरे के अपने हैं, यहाँ दूसरा कोई नहीं हैं। आपस में प्रेमभाव को नश्ट कर सामाजिक विकास नहीं हो सकता है। वर्ण व्यवस्था जिसने तत्कालीन समाज को चार वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र में बॉट दिया और आपस में हीन भावना को उजागर कर मानवतावाद का ऱ्हास किया। वहाँ संत रविदास अपने काव्य में वर्णवाद का खंडन करते हुए समता एवं समदृश्टि को उजागर करते हुए कहते है-

रविदास जात मत पूछहूं,
का जात का पात ।
बामन खत्री बैस सूद्र,
सभन की एकै जात।।

इसी वर्णभेदभाव का तिरस्कार कर ब्राहमण, क्षत्रिय, वैश्य, सूद्र इन चातुवर्णो को एकसमान मानते है। इनका कोई धर्म नहीं है, जहाँ न कोई उच्च है, न कोई निम्न सभी की एक ही जाती हैं, वह हैं- मनुश्य मात्र। कर्म पर आधारित बनाई हुई जाति व्यवस्था तत्कालीन समाज तक आते आते जन्म पर आधारित बन गई और यह जन्म पर आधारित बनी हुई जाति व्यवस्था तत्कालीन समाज को अस्थिर बनाकर मनुश्य के मनुश्यत्व का ऱ्हास करते हुए मानवता के टुकडे कर गई। यह देखकर संत रविदास तिलमिलाते हुए अपने काव्य में मानवीय समदृश्टि के स्वर उजागर करते हुए कहते है-

जात जाप के फेर मह
उरझि रहहि सभ लोग ।
मानुशता को खात है
रविदास जात का रोग ।।

सामाजिक जाति व्यवस्था ने मानवता को डस लिया है। मनुश्य जात-पात के फेर में उलझ गया है और इस जात-पात के चक्कर में अपने मानवीय तत्वों को खो बैठा है। यही एक कारण है कि जाति के इस रोग ने मानवता को नश्ट कर सामाजिक समता तथा प्रेमभाव को खोकला कर दिया। संत रविदास इस जाति व्यवस्था के खिलाफ जाकर अपने काव्य में समदृश्टि का भाव उजागर करते हैं। जाति व्यवस्था का तिरस्कार करते हुए समानता का यह उपदेश अपने काव्य में करते है-

जब सभ करि दोउ हाथ पग,
दोउ नैन दोउ कान ।
रविदास पृथक कैसे भये,
हिंदू-मुसलमान ।[३]

धर्म भेद के हर तहजीब को उन्होंने अपने काव्य के माध्यम से झंझोडा। गैर बराबरी व छूआछूत जैसे घिसेपिटे रस्म - रीवाजों के खिलाफ विद्रोह कर उन्होने समाज में समदृश्टि को बढावा देते हुए कहा कि मानव मात्र एक समान है। सबको दो नैन,

दो कान, दो हाथ है – कोई अलग नहीं। हिंदू और मुसलमान भी एक है उनमें कोई भेद या अलगता नहीं है। हिंदू मुसलमान का यह भेद मानवनिर्मित है जो समाज में भेदभाव का कडवा बीज बोकर प्रेम तथा समदृश्टि को नश्ट करने का धैर्य रखता है। किंतु मनुश्य मनुश्य में समानता, समभाव और प्रेमभाव ही मानवता का बीज है। यही नैतिकता है। समदृश्टि मनुश्य जीवन में उजागर करती है। प्रेम ही मानवता का वास है। संत रविदास ने अपने काव्य से हमें यह ज्ञात कराया है कि प्रेम से ही व्यक्ति व्यक्ति से जुडा है। प्रेम किसी भी स्तर का, किसी भी संबध में हो सकता है। जहाँ भी प्रेम है वही अपनत्व, सह्रदयता, सहयोगता और समभाव की वृत्ति है। प्रेम तथा समदृश्टि ही मनुश्य – मनुश्य के बीच दायित्व का बोध कराती है। एक दूसरे के सूख दुःख में प्रेम तथा समदृश्टि का भाव सहाय्यक बनता है। शरीर नश्वर है लेकिन प्रेम अनश्वर है। सच्चा प्रेम भाव और समभाव मानवीय जीवन के हर स्तर पर पवित्र है

२) अहिंसा का भाव

निर्गुणवादी संतों की मानवीय नैतिक संकल्पना के प्रमुख तत्व अहिंसा है। उन्होंने अपने काव्य में अहिंसा के पालन को विशेष महत्व प्रदान किया है। संत रविदास इसी संप्रदाय से जुडकर अहिंसात्मक मानवतावादी दिशा में जन का पथ प्रदर्शन प्रमुखतः से किया है। उन्होंने अहिंसा की अपनी एक संज्ञा स्थापित की है। उनके अहिंसा का मतलब किसी को क्षति न पहुँचाना। वे अहिंसा के भाव में मनुश्य एवं प्राणी मात्रा के प्रति प्रेम तथा अपनत्व की भावनाओं को सम्मिलित करते हैं। मानवतावादी विचारधारा की अहिंसा ही सबसे बडी भक्ति के आधार पर मानवीय तथा मानवीय मूल्यों की स्थापना हो जाती है। इसीलिए मानवी जीवन में अहिंसा को मानवतावाद का उगमस्थान कहा गया है। उनके अहिंसा के भाव पर आधारित मानवतावादी विचारधारा के बीज हमें जैन धर्म के 'अहिंसा परमो धर्म ' इस सार वाक्य में तथा बौद्ध धर्म के पंचशील तत्वों में मिलते है। सत्य तो यह है कि अहिंसा यह एक ऐसा भाव है जिसमें करुणा, मैत्री, सह्रदयता, प्रेम, समदृश्टि, आत्मीयता एवं अपनत्व की भावना इन सभी भावनाओं का समूचा यथार्थ सम्मिलित है। इस तरह का मानवतावाद हमें सिर्फ निर्गुणवादी संतों की विचारधारा में मिलता है, जो कर्मकांडों के खिलाफ जाकर मनुश्य को अपने मनुश्यत्व का बोध कराकर उनमें सृश्टि पर स्थित सभी प्राणिमात्राओं के प्रति सम्यक और सम्मान की दृश्टि बहाल करता है।

संत रविदास के काव्य में जैन तथा बौद्धधर्म में उत्पन्न हुआ अहिंसा का भाव परिलक्षित होता है। उनके काव्य से यह मालूम होता है कि समस्त प्राणिमात्राओं के लिए करुणा थी। उनका सभी मनुश्यों के साथ भाईचारे का व्यवहार था। वे जाति, वर्ण, वर्ग व धर्म आदी के आधार पर मनुश्य के पहचानने के व्यवहार को घृणास्पद और अहिंसा के खिलाफ मानते थे। युगीन समाज में होती रही प्राणी हत्या को देखकर वे तिलमिलाते हुए कहते हैं–

रविदास जीव मत मारहिं,
इक साहिब सभ मांहि ।
सभी मांहि एकउ आतमा,
दूसरह कोउ नांहि।।[४]

जीव हत्या मत करो क्योकि समस्त जीव एक ही तत्व से बने हुए है। सभी प्राणियों में, सभी जीवों में एक ही आत्मा का वास है। कोई भी जीव किसी जीव से अलग नही है। सभी जीव मात्र समान है। अपने काव्य में समदृश्टि का भाव उजागर कर हिंसा के खिलाफ वे बोलते है और अपने काव्य में हिंसा न करने का उपदेश तत्कालिन समाज को देते हैं। जो लोग प्राणी हत्या करते है उनको वे हत्या के समय प्राणियों को जो वेदना होती है, उनको उस वेदनाओं से ज्ञात कराकर वे कहते है-

रविदास मूंडह काटि करि,
मूरख कहत हलाल
गला कटावहु अपना

तउ का होइहि हाल।।

वो लोग मूर्ख होते है जो प्राणियों का सिर काटकर उनको हलाल करते है। संत रविदास ऐसे लोगों पर अपना रोश जताते हुए कहते है कि जिस तरह आप किसी प्राणियों की वेदना एवं पीडा का एहसास हो जायेगा। हिंसा के इस कडी को उजागर कर संत रविदास प्राणी हत्या के खिलाफ जाते है और वे सभी लोगों को अहिंसा का संदेश देते हैं। जो गाय, भेड बकरी को काटकर उसका मांस भक्षण करते है। वे फरमाते है कि जीव को मुरदा कर उसका मांस जो खाते है, वे मनुश्य एवं मनुश्येतर प्राणी भी मुरदे के समान होते हैं। उनमें हिंसक वृत्ति प्रज्वलित होती है। उनमें पवित्र आत्मा का वास नहीं होता। वे मांसाहार न करने की प्रेरणा देते है और सभी प्राणिमात्राओं की हत्या को वे ब्रह्मरुपी पवित्र आत्मा कि हत्या समझते है। कहते है कि-

प्राणी वध मत कीजिए,
जीव ब्रह्म समान।
रविदास पाप न छूटहिं,
करोर गउँन करि दान।

जीव हत्या करने वाले सभी मनुश्य हिंसक एवं पापी है। उनका यह पाप, हिंसा का भाव अपवित्र मानकर उनको फटकारते हुए कहते है कि करोडों गायों का दान करने पर आपकी अपवित्रता एवं पाप नहीं क्षम सकता।

संत रविदास अपने काव्य में मुसलमानों को हिंसा का संदेश देते हुए मांसाहार त्यागने की सीख देते है। उन्होंने यह आश्चर्य भी जताया है कि कैसे किसी को जीव हत्या कर खुदा का दर्शन हो सकता है? साथ ही साथ वे यह भी आश्चर्यता से कहते है कि कैंसे पीर, पैगंबर और औलिया यह हिंसक भाव जानते हुए भी लोगों को यह सीख नहीं बता रहे है कि मांसाहारी को खुदा के दर्शन नहीं होते। रविदास दांभिक एवं हिंसक लोगों पर कडा प्रहार करते है कि-

रविदास जि पोशण हेतु गउ बकरी नित खाय।
पढई नमाजहि रात-दिन तबहुं भिस्त न पाय।।

वे समस्त लोग कर्मकांडी है जिनका हृदय पत्थर का बना हुआ है। जो अपने पोशण हेतु गाय, बकरियाँ अपने नित्य के आहार में खाते हैं और अपनी पवित्रता को पाने के लिए दिन रात नमाज भी पढते है। उनके मतानुसार यह पागलपण और हिंसक वृत्ति मनुश्य एवं मनुश्यत्व की संकल्पना में सम्मिलित नहीं हो सकती। अतः वे अपने काव्य में लोंगों को ज्ञान देते है कि-

जीव हिंसा मत करो,
मत कर मदिरा पान ।
रैदास कहें हरि सर्व में,
ये निश्चय कर जान ।।

वे अपने जीवन में सलाह देते है कि जीव हिंसा कभी न करो। इसके अलावा मदिरा पान एवं नशीली वस्तुओं का सेवन मत करो क्योकि हर जीव में एक पवित्र आत्मा का वास होता है जिसे रविदास हरि कहते हैं। इस बात पर विश्वास रखकर खुद में अहिंसा का भाव उजागर कर मानवतावादी विचारधारा का पुरस्कार करते है।

३) दया और परोपकार

संत रविदास के काव्य का मूल भाव दया और परोपकर है। संत रविदास के साथ अन्य निर्गुण संतो के साहित्य में दया और परोपकार का भाव परिलक्षित होता है। इसका कारण यह है कि युगीन परिस्थितीयों में जनता पर शासक वर्ग का अत्याचार सामाजिक विशमता के कारण निम्न वर्गियों के प्रति उच्च वर्गिय लोगों की तिरस्कार होने के कारण समाज अस्थिर हो गया था। ऐसे अस्थिर समाज को स्थिर स्थिति में लाने के लिए निर्गुण संतो ने समाज में मानवीय करुणा एवं दया भाव का प्रचार किया। दया और परोपकार कह उदात्त मानवीय भाव है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने दया और परोपकार की व्याख्या करते हुए लिखा है कि 'दूसरों के दुःख के परिज्ञान से जो दुःख होता है वह दया तथा परोपकार के नामों से पुकारा जाता है और अपने दुःख को दूर करने की उत्तेजना करता है।[५] परोपकार की भावना मनुश्य के मन में दया के भाव से ही प्रेरित

होती है। निर्गुण संतो के साहित्य में दया और परोपकार का भाव मानवीय संवेदना के रुप में हमें मिलता है। दूसरों के प्रति मन में प्रेम, लगन एवं करुणा का भाव निर्माण कर अपने लिए परोपकार की भावना जागृत करना यही निर्गुणवादी संतों के काव्य में हमें दया और परोपकार का भाव मानवीय भावनाओं के रुप में हमें मिलता है। उनके अनुसार समस्त जीवों के प्रति समभाव दिखाना और वैश्विक मित्रता एवं अपनत्व की भावना को जगाना ही दया और परोपकार का भावना है। उनके इस मानवीय तत्वों के सहारे उन्होंने युगीन समाज में जो क्रुरता और कट्टरता के खिलाफ एक मानवीय आंदोलन छोडकर समस्त समाज मनुश्य मात्र एक समान होने का नारा देकर सभी जाति, धर्म, वर्ण के लोगों के मन में सहदयता का भाव निर्माण करने का सफल प्रयास किया। उन्होंने अपने काव्य में दया और परोपकार को सबसे बड़ा धर्म माना। समस्त प्राणीमात्राओं में एक पवित्र आत्मा का अंश मानकर उनका सम्मान किया। संत रविदास के काव्य में हमें मन और मन की निर्मलता जिसके कारण हृदय में प्रेम, करुणा, दया, प्रसन्नता और परोपकार की भावना हमें दिखाई देती है। उनके मतानुसार विश्व के समस्त मनुश्य एवं मनुशतेर प्राणियों को एक समान मान लिया जाता है, तो हदय में दया और परोपकार का भाव उत्पन्न होना स्वाभाविक है। वे अपने काव्य में निःसंदेहता से यह कहते है कि दया के अभाव में मानवता का लोप हो जाता है। जहाँ दया और परोपकार है वहाँ मानवता का वास है। जिन व्यक्तियों के हृदय में दया और परोपकार का अभाव है वे ज्ञानी होने के बावजूद भी अज्ञानी है। जिनके हदय में दया भाव नही है उनके बारे में संत रविदास कहते है–

दया धर्म जिन्ह नहि,
हिरदै पाप को कीच ।
रविदास तिन्हहि जानि हो,
महापातकी नीच ।। [६]

जिनके हदय में दया भाव नहीं है उनको रविदास नीच समझते हैं। उनके इस काव्य पंक्तियों से यह प्रतित होता है कि संत रविदास दया भाव की भावनाओं को धर्म का नाम देते हैं। उनके लिए जिन लोगों में इस धर्म का अभाव होता है वे महापातकी और पापी है। ऐसे महापापी लोग हिंसक होते है। इनका स्वभाव क्रूर होता है। उनमें मानवीय संवेदना नहीं होती। ऐसे ही लोग प्राणीहत्या कर मांस भक्षण करते है। इन लोगों संबंध में संत रविदास ने अपनी अमृतवाणी में कहा है–

दया भर हिरदे नही,
भखहि पराया आस ।
ते नर नरक महं जाहहि,
संत भाशै रविदास ।।[७]

प्राणी हत्या और मांसाहार के खिलाफ जाकर संत रविदास दया भाव और परोपकार की भावना लोगों में उत्प्रेरित की है। वे अपने युगीन समाज को मानवतावादी समाज बनाना चाहते थे जिसमें दया भाव और परोपकार की भावना जैसे नैतिक मूल्य ओतप्रोत है। हर एक में सात्विकता का वास हो। जाति एवं धर्म के चक्कर में न आकर मनुश्य मनुश्य के बीच की कुटिलता, भेदभाव आदि नश्ट कर प्रेम, दया भाव और परोपकार की भावना हर एक में जगाकर अपने जीवन में ऐसें भावनाओं का सम्मान कर उसे सर्वोच स्थान प्रदान करें। इस धारणा को रविदास ने अपने काव्य का उद्देश्य बनाया दिखाई देता है। यहाँ तक कि धर्म की संकल्पना इस तरह की है धर्म का काम मानव मानव में प्रेम पैदा करना और दया भाव तथा परोपकार की भावना जागृत करना है। इस संबंध में वे कहते है–

'कृशण करीम, राम हरि राघव जब लग एक न पेशा। वेद कतेब कुरान पुरानक, सहज एक नहिं वेशा।'[८] जब तक हम सभी धमो में दया भाव और परोपकार की भावनाओं का दर्शन नहीं करते सभी धर्म ग्रंथ बेकार है। धर्म ग्रंथो का मूल रूप से यह कार्य है कि समाज में दया भाव और परोपकार की भावनाओं को बढावा देकर उनका प्रचार एवं प्रसार

कर लोगो को अपना जीवन कार्य बिताने के लिए विवश करें ताकि आपस में बैर, विशमता, कुटिलता और भेदभाव आदि समाज विरोधी और मानवता विरोधी तत्वों का प्रचार करें। इस तरह संत रविदास अपने काव्य में धर्म और धर्मग्रंथ जो मानवतावाद के विरोधी है, जो लोगों के मन में आपस के बैर और भेदभाव की भावना चेताते है। ऐसे धर्मग्रंथो पर कडा प्रहार करके अपने काव्य में दया भाव और परोपकार की भावना का महत्व स्पश्ट कर मानवतावादी विचारधारा में उनके अहंम् स्थान पर मोहर लगा देते है ।

४) श्रम और मानवीयता

संत रविदास अपनी मानवतावादी विचारधारा के काव्य में श्रम को अनन्य साधारण महत्व प्रदान करते है। युगी समाज में अंधविश्वास, धार्मिक कर्मकांड के अंधकार के कारण लोग श्रम पर विश्वास न कर वे धार्मिक अंधश्रध्दा पर विश्वास रखते थे। छल और कपट का बोलबाला होने के कारण लोगों में कश्ट करने की वृत्ति कम हो गई थी। यही एक कारण रह गया है कि संत रविदास ने बौध्द धर्म की श्रमण परंपरा को आगे चलाते हुए श्रम मानवता का आधारस्तंभ है यह बताया है। मानवता को सही रूप में प्रस्थापित करने के लिए सच्चाई पर चलनेवाला जीवन मार्ग और श्रम पर आधारित मानवी जीवन को संत रविदास अपने काव्य में महत्व प्रदान करते है। अन्य साधु संतों की कर्मण्यता और भिक्षावृत्ति के विरुध्द जाकर रविदास ने अपने पैतृक व्यवसाय को अपनाकर निर्गुनवादी संतो में एक मिसाल कायम की है। उन्होंने श्रम साधना को ही मानव का धर्म बताया है। वे कहते है कि स्वंय श्रम करनेवाला कभी असफल नहीं होता। -

रविदास श्रम कर खाहहि,
जौ लौं पार बसाय ।
नेक कमाई जऊ करई,
कबहुँ न निश्फल जाय । ।[१]

श्रम को हि मानवीयता का आधार मानकर संत रविदास उपदेश देते है। युगीन समाज में श्रम का प्रसार कर कहते है कि श्रम मन को भांति देता है। श्रम मानवीयता को बढावा देता है। अगर सभी लोग अपने लिए, अपने कुटुंब के लिए, अपने समाज के लिए श्रम करते है तो स्वाभाविकतः ही अपने और अपने कुटुंब के साथ साथ भी समाज की उन्नति होगी। अतः वैश्विक धरातल पर विश्व का विकास होकर मानव जाति का विकास साध्य होगा। इसी से मनवीयता को संभव कर आर्थिक विशमता तथा सामाजिक विशमता नश्ट होगी। संत रविदास के ये उच्च विचार उनके काव्य में प्रतित होते है। वे हर एक को श्रम की महत्ता समझाते हुइ कहते है कि-

रविदास श्रम कर खाइहि,
जो लो पार बसाय ।
नेक कमाई जऊ करई,
कबहूँ न निहफल जाय ।।

मनुश्य को सदा परिश्रम करके ही उदरनिर्वाह करना चाहिए। छल कपट की कमाई से सदा दूर रहना चाहिए। मनुश्य के परिश्रम से पाई हुई नेक कमाई, मनुश्य को आनंद प्रदान करती है। वो कभी भी निश्फल नहीं जाती। इस तरह का गुजरान मनुश्य के जीवन में चैन और अमन बहाल करता है। संत रविदास समाज में मानवीयता बरकरार रखने के लिए लोगों में क्रियाशील होना इस बात पर बडा जोर देते है। उनके मतानुसार कर्म मनुश्य को सक्षम बना देता है और मनुश्य में आत्मविश्वास जो कि सफलता की कुंजी निर्माण करता है। वे कहते है कि मनुश्य ने सदा आशान्वित होकर कर्म करना चाहिए। तभी अभीश्ठ कर्म फल की प्राप्ति होगीं। वे अपने काव्य में कहते है-

कर्म बंधन मंह रति रहयो
फल की तज्यो न आस ।
करम मनुश्य को धरम है
सत्त भाशै रैदास । ।
श्रम को ईसर जानि कै जउ
पूजहि दिन रैन ।

खरैदास तिन्हहि संसार मंह
सदा मिलहि सुख चैन ।। [१०]

ओ उनके दृश्टि में श्रम ई वर का रूप है। श्रमसाधना ही संसार में सुख भांति, आर्थिकता एवं वैभव जो मानवीयता के लिए महत्व प्रदान करती है। यह श्रमसाधना एक भक्ति है। जिसे हमें दिन रात करनी चाहिए। यह अद्वितीय किंतु सरल साधना है। इससे श्रम की गरीमा का बोध होता है। संत रविदास के इन विचारों को डॉ. महेश प्रसाद स्पश्ट करते है कि / मजदूर और किसान के लिए श्रम ही ई वर है। इससे स्पश्ट है किसी देवी-देवताओं के अवतार का सहारा न लेकर अपने बाहु-बल, बुद्धि बल पर विश्वास कर आगे बढने का संदेश दिया हैं। संत रविदास अपने काव्य में कर्म को जन्म से भी अधिक महत्व बताते है। उनके मत से कर्म ही मनुश्य का चरित्र निर्धारित करता है और उस चरित्र की उच्वता की कसौटी व्यक्ति का कर्म ही होता । श्रवण परंपरा का आधार कर्म को मानते हुए संत रविदास ने काव्य में कहा है- रविदास जन्म के कारनै, होत न कोऊ नीच।

नर कू नीच करि डारि है,
ओछे करम को कीच । ।
रविदास सुकरमन कारन सौं
नीच ऊंच हो जाय ।
करइ कुकरम जौ ऊंच भी
तौ महानीच कहलाय ।।

युगीन समाज में जाति एवं वर्ण, भेदभाव अपने चरम पर था। उसका कडा विरोध करते हुए संत रविदास ने यह स्पश्ट किया कि कर्म ही मनुश्य को ऊंच एवं नीच निर्धारित करता है। किसी जाति में जन्म लेने से मनुश्य ऊंच एवं नीच नहीं कहलवाता है। उसके ऊंचे श्रेष्ठ बना देते है फिर चाहे वो निम्न जाति का क्यों न हो और ऊंच जाति का इंसान क्यों न हो। आदमी कितना ही बड़ा क्यों न हो अगर वह कुकर्म करता है तो महानीच ही कहलवाता है। अतः अच्छा एवं सुकर्म करने का उपदेश संत रविदास समस्त मनुश्य मात्रा को देते है। वस यह संकेत देते है कि ठता यह व्यक्ति के श्रेश्ठता की कसौटी नहीं बल्कि कर्म जो कि स्वभाव है। यह व्यक्ति के व्यक्तित्व की सही अर्थ में कसौटी है। श्रम जीवन में आनंद बहाल कर देता है और मन को भांति। बीना परिश्रम करें किसी ओर के श्रम का फल कोई खाता है तो उसके जीवन में आंति और रोग का वास होता है। इस तरह संत रविदास युगीन समाज में ब्राह्मण को परोपजीवी होने के कारण फटकारा और नेक कमाई का परामदिया। यह सदाचार का संत रविदास का दपदे डॉ. महेश प्रसाद अहिरवार इस तरह स्पश्ट करते है कि 'ब्राह्मण छल कपट का मार्ग त्यागकर ऋजु पथ धारण करे, किन्तु ब्राह्मण कुत्ते की टेडी दुम की भाँति जस हराम की कमाई पर जिंदा है । / यही बात रविदास अपने काव्य में कहते है-

नेक कमाई जऊ करई,
गृह तजि वन नहि लाय ।
रविदास हमारी रामराय,
गृह नहीं मिलि हि आया ।।

उनके अनुसार नेक कमाई करनेवालों को वन में बैठकर पूजा करने की जरुरत नही। कर्म ही उनकी साधना है और यह साधना करने पर निचित फल मिल जाता है। वे कर्म को मनुश्य का धर्म मानते है। वे अपने काव्य में कहते है-

रविदास मनुश्य का धरम है,
करम करहि दिन रात,
कर्म नहिं फल पावना,
नही काहु के हाथ ।।

रविदास ने श्रम को मनुश्य का धर्म मानकर उस धर्म की साधना करने का उपदेश दिया। वे कहते है कि जो आदमी समय नश्ट करता है वह समाज पर बोझ है। संत रविदास समय के साथ-साथ चलने की सलाह देते है क्योंकि उनके मतानुसार समय का उचित उपयोग ही कर्मसाधना है।

जो दिन आवहि सो दिन जावही।
करना कूच रहनु थिर नाही।।
कह रविदास निदानि दीवाने।

चेतसि नाही दुनिया फल खाने ।।[११]

कर्म के बिना जीवन में व्यक्ति का कोई अस्तित्व नहीं होता। अपने अस्तित्व को स्थापित करने के लिए श्रम के बिना दूसरा कोई उपाय नही है। श्रम मनुश्य के अस्तित्व के साथ जोडकर उसकी पहचान बनाता है। संत रविदास अपने काव्य में श्रम के साथ - साथ मनुश्य के कर्म को विशेष महत्व प्रदान करते है। अतः अच्छे कर्म मानव की मानवीयता को जगाता है और श्रम मानवीयता का आधार बने मानवतावादी समाज का निर्माण इन्ही नैतिक मूल्यों के सहारे होता हैं ।

संदर्भ सूची :

१) भगवती प्रसाद निदारिया, 'रविदास व्यक्तित्व और कृतित्व' प्रकाशन, पृ. ५०

२) रविदास द.नि. दोहा पृ.१४७

३) रविदास द.नि. दोहा पृ.१४८

४) सिंघल डॉ. धर्मपाल - 'रविदास दर्पण', पृ. २५९

५) शुक्ल रामचंद्र, 'चिंतामणि - भाग १', पृ. ३६

६) 'आचार्य पृथ्वीसिंह आजाद', रविदास द.नि. दोहा, पृ.१३१

७) आचार्य पृथ्वीसिंह आजाद, रविदास द.नि., साखी, पृ.३१

८) रविदास द.नि. 'दोहा', पृ.१२६

९) 'आचार्य पृथ्वीसिंह आजाद', रविदास द. नि., पृ. ११५

१०) आचार्य पृथ्वीसिंह आजाद, 'गुरु रविदास', पृ. ७४

११) 'रविदास वचन सुधा', पृ. ३३

हिंदी विभागाध्यक्ष

कला, विज्ञान आणि वाणिज्य महाविद्यालय, इंदापूर

***